IJMRSETM

e-ISSN: 2395 - 7639

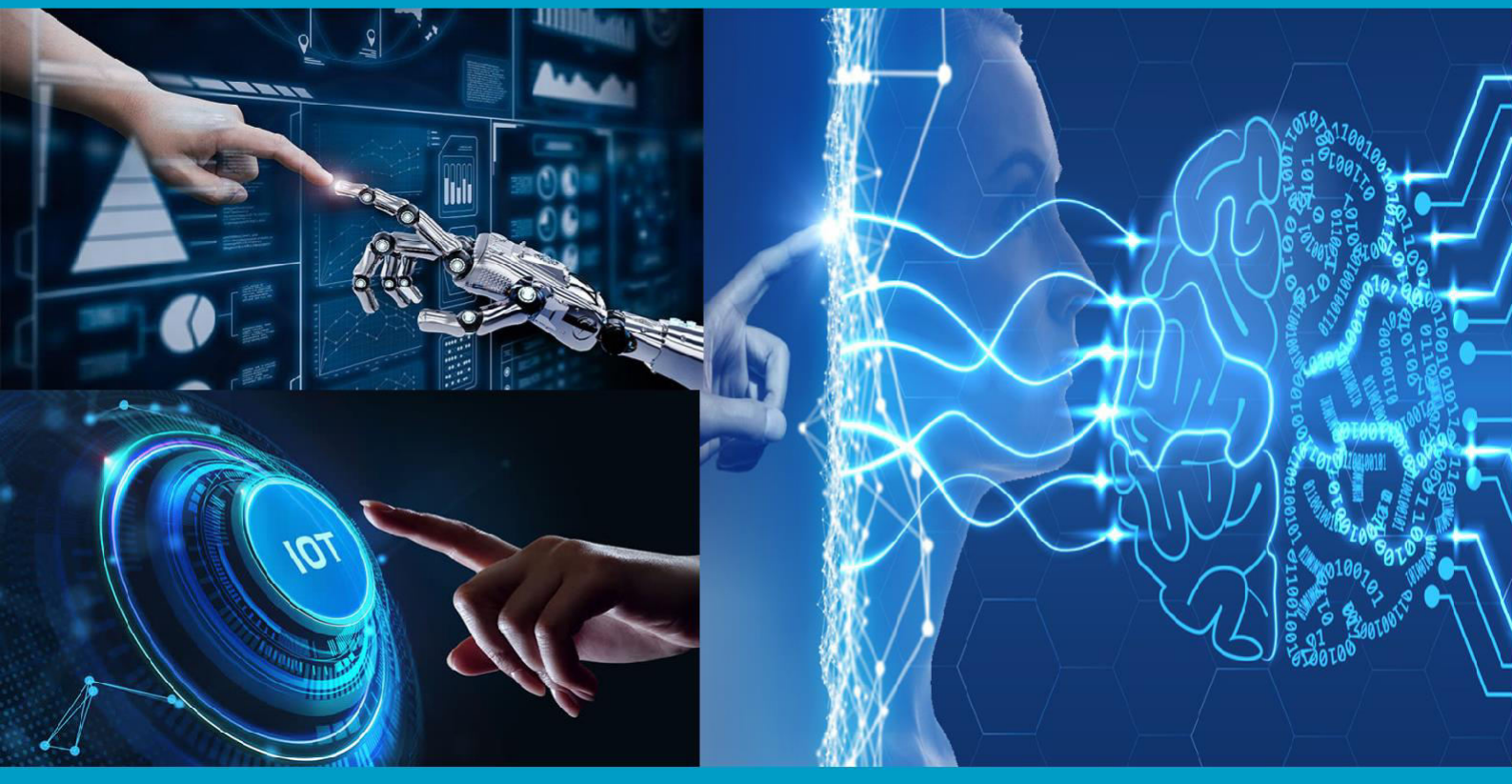

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

Volume 10, Issue 2, February 2023

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 7.580

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 2, February 2023 |

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन से संबंधित, गांधीवाद

श्रीमती सुमन कुमारी

सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान, राजकीय शाकम्भर स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सांभर लेक, जयपुर, राजस्थान

सार

गांधीवाद एक ऐसी विचारधारा है जो पूर्णतः अहिंसा पर आधारित थी। अहिंसा एक आत्मिक बल का प्रतीक है जिसका अर्थ है हिंसा को त्यागकर सत्य की रह पर चलना। महात्मा गांधी ने अहिंसा के बल पर एक सुव्यवस्थित समाज की स्थापना की थी जिसका प्रथम उद्देश्य देश में शांति के माहौल को बनाए रखना था।

परिचय

गाँधीवाद महात्मा गाँधी के आदर्शों, विश्वासों एवं दर्शन से उदभूत विचारों के संग्रह को कहा जाता है, जो स्वतंत्रता संग्राम के सबसे बड़े राजनैतिक एवं आध्यात्मिक नेताओं में से थे। यह ऐसे उन सभी विचारों का एक समेकित रूप है जो गाँधीजी ने जीवन पर्यंत जिया था। गांधीजी एक उदारवादी व्यक्ति थे.

सत्याग्रह

सत्य एवं आग्रह दोनो ही संस्कृत भाषा के शब्द हैं, जो भारतीय स्वाधीनता संग्राम के दौरान प्रचलित हुआ था, जिसका अर्थ होता है सत्य के प्रति सत्य के माध्यम से आग्रही होना।

सत्य

गाँधीवाद के बुनियादी तत्वों में से सत्य सर्वोपरि है;। वे मानते थे कि सत्य ही किसी भी राजनैतिक संस्था, सामाजिक संस्थान इत्यादि की धुरी होनी चाहिए। वे अपने किसी भी राजनैतिक निर्णय को लेने से पहले सच्चाई के सिद्धांतो का पालन अवश्य करते थे।

गाँधी जी का कहना था “मेरे पास दुनियावालों को सिखाने के लिए कुछ भी नया नहीं है। सत्य एवं अहिंसा तो दुनिया में उतने ही पुराने हैं जितने हमारे पर्वत हैं।”

सत्य, अहिंसा, मानवीय स्वतंत्रता, समानता एवं न्याय पर उनकी निष्ठा को उनकी निजी जिंदगी के उदाहरणों से बखूबी समझा जा सकता है।

कहा जाता है कि सत्य की व्याख्या अक्सर वस्तुनिष्ठ नहीं होती। गाँधीवाद के अनुसार सत्य के पालन को अक्षरशः नहीं बल्कि आत्मिक सत्य को मानने की सलाह दी गई है। यदि कोई ईमानदारीपूर्वक मानता है कि अहिंसा आवश्यक है तो उसे सत्य की रक्षा के रूप में भी इसे स्वीकार करना चाहिए। जब गाँधी जी प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान स्वदेश लौटे थे तो उन्होंने कहा था कि वे शायद युद्ध में ब्रिटिशों की ओर से भाग लेने में कोई बुराई नहीं मानते। गाँधी जी के अनुसार ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा होते हुए भारतीयों के लिए समान अधिकार की माँग करना और साम्राज्य की सुरक्षा में अपनी भागीदारी न निभाना उचित नहीं होता। वहीं दूसरी तरफ द्वतीय विश्वयुद्ध के समय जापान द्वारा भारत की सीमा के निकट पहुँच जाने पर गाँधी जी ने युद्ध में भाग लेने को उचित नहीं माना बल्कि वहाँ अहिंसा का सहारा लेने की वकालत की है।

अहिंसा

अहिंसा का सामान्य अर्थ है 'हिंसा न करना'। इसका व्यापक अर्थ है - किसी भी प्राणी को तन, मन, कर्म, वचन और वाणी से कोई नुकसान न पहुँचाना। मन में भी किसी का अहित न सोचना, किसी को कटुवाणी आदि के द्वारा भी पीड़ा न देना तथा कर्म से भी किसी भी अवस्था में, किसी भी प्राणी का कोई नुकसान न करना।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 2, February 2023 |

ब्रम्हचर्य

खादी

उपवास व्यक्ति के अनुसार ही उत्तपन्न होता है|उपवास व्यक्ति मे शारीरिक अंगो मे तन्दुरस्ती लाता है|यह अनुकुल परिस्थितियो में करना लाभदायक होता हैं|

धर्म

गाँधीजी के अनुसार धर्म और राजनीति को अलग नही किया जा सकता है क्योंकि धर्म मनुष्य को सदाचारी बनने के लिए प्रेरित करता है । स्वधर्म सबका अपना अपना होता है पर धर्म मनुष्य को नैतिक बनाता है । सत्य बोलना, चोरी नहीं करना, परदु:खकातरता,दूसरों की सहायता करना आदी यही सभी धर्म सिखाते हैं । इन मूल्यों को अपनाने से ही राजनीति सेवा भाव से की जा सकेगी । गाँधीजी आडम्बर को धर्म नही मानते और जोर देकर कहते हैं कि मन्दिर मे बैठे भगवान मेरे राम नही है । स्वामी विवेकानंदजी के दरिद्र नारायण की संकल्पना को अपनाते हुए मानव सेवा को ही वो सच्चा धर्म मानते हैं । वास्तव मे उनका विश्वास है कि प्रत्येक प्राणी इश्वर की सन्तान हैं और ये सत्य है; सत्य ही ईश्वर है ।

विभाजन की अवधारणा

सैद्धांतिक रूप से गाँधीजी भारत के विभाजन के खिलाफ रहे क्योंकि इससे उनके धार्मिक एकता की भावना को चोट पहुँचती थी[1] उन्होंने भारत के विभाजन के बारे में ६ अक्टूबर १९४६ को अपने पत्र हरिजन में लिखा था:

[पाकिस्तान की माँग] जैसा कि मुस्लीम लीग द्वारा रखी गई है पूर्ण रूप से गैर-इस्लामी है एवं मुझे इसे पापपूर्ण कहते हुए भी कोई संकोच नहीं। इस्लाम पूरी मानवता के भाईचारे एवं एकता के पक्ष में रहा है इसलिए जो भारत के टुकडे करके दो आपस में लडने वाले समूह पैदा करना चाहते हैं वे सही मायनों में न सिर्फ भारत बल्कि इस्लाम के भी दुश्मन हैं। चाहे वे मेरे टुकडे टुकडे ही क्यों न कर दें लेकिन वे मुझे किसी गलत चीज को सही मानने के लिए मजबूर नहीं कर सकते[...] हमें अपनी दृष्टि छोडने की बजाय सभी मुसलमान भाइयों का दिल प्यार से जीतना होगा[2]

विचार-विमर्श

गांधीजी के आर्थिक विचार अहिंसात्मक मानवीय समाज की अवधारणा से ओत-प्रोत हैं। उनके आर्थिक विचार आध्यात्मिक विकास को प्रोत्साहित करने वाले एवं भौतिकवाद के विरोधी हैं। ' गांधीवादी अर्थशास्त्र ' (Gandhian economics) नामक यह शब्द सबसे पहले उनके प्रसिद्ध अनुयायी जे.सी. कुमारप्पा ने प्रयोग किया था। गांधीगिरी एक पुराना शब्द है जो गांधीवाद के मूल्यों की ओर इशारा करता है जिसमें सत्याग्रह एवं अहिंसा सबसे मुख्य है। इस शब्द को लोकप्रिय रूप तब मिला जब २००६ में हिंदी फिल्म लगे रहो मुन्नाभाई प्रदर्शित हुई।[1][2][3] सर्वोदय, अंग्रेज लेखक रस्किन की एक पुस्तक अनटू दिस लास्ट का गांधी जी द्वारा गुजराती में अनूदित एक पुस्तक है। 'अन्टू द लास्ट' का अर्थ है - इस अंतवाले को भी। सर्वोदय का अर्थ है - सबका उदय, सबका विकास।

सर्वोदय भारत का पुराना आदर्श है। हमारे ऋषियों ने गाया है-"सर्वेपि सुखिन: संतु"। सर्वोदय शब्द भी नया नहीं है। जैन मुनि समंतभद्र कहते हैं - सर्वापदामंतकरं निरंतं सर्वोदयं तीर्थमिदं तवैव। "सर्व खल्विदं ब्रह्म", "वसुधैव कुटुंबकं", अथवा "सोऽहम्" और "तत्त्वमसि" के हमारे पुरातन आदर्शों में "सर्वोदय" के सिद्धांत अंतर्निहित हैं।

सर्वोदय समाज गांधी के कल्पनाओ का समाज था, जिसके केन्द्र मे भारतीय ग्राम व्यवस्था थी। विनोबा जी ने कहा है, सर्वोदय का अर्थ है - सर्वसेवा के माध्यम से समस्त प्राणियो की उन्नति। सर्वोदय के व्यवहारिक स्वरुप को हम बहुत हद तक विनोबा जी के भूदान आन्दोलन मे देख सकते है।

सुबहवाले को जितना, शामवाले को भी उतना ही-प्रथम व्यक्ति को जितना, अंतिम व्यक्ति को भी उतना ही, इसमें समानता और अद्वैत का वह तत्व समाया है, जिसपर सर्वोदय का विशाल प्रासाद खड़ा है। (दादा धर्माधिकारी - "सर्वोदय दर्शन")

सर्वोदय का उद्देश्य

१ आत्म-संयम

२ शोषणहीन समाज

३ सर्वांगीण विकास

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 2, February 2023 |

४ लोकनीति के आधार पर शासन

सर्वोदय दर्शन

"सर्वोदय" का आदर्श है अद्वैत और उसकी नीति है समन्वय। मानवकृत विषमता का वह अंत करना चाहता है और प्राकृतिक विषमता को घटाना चाहता है। जीवमात्र के लिए समादर और प्रत्येक व्यक्ति के प्रति सहानुभूति ही सर्वोदय का मार्ग है। जीवमात्र के लिए सहानुभति का यह अपूत जब जीवन में प्रवाहित होता है, तब सर्वोदय की लता में सुरभिपूर्ण सुमन खिलते हैं। डार्विन ने कहा-"प्रकृति का नियम है, बड़ी मछली छोटी मछली को खाकर जीवित रहती है।" हक्सले ने कहा-जीओ और जीने दो।" सर्वोदय कहता है-"तुम दूसरों को जिलाने के लिए जीओ।" दूसरों को अपना बनाने के लिए प्रेम का विस्तार करना होगा, अहिंसा का विकास करना होगा और शोषण को समाप्त कर आज के सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन करना होगा।"

"सर्वोदय" ऐसे वर्गविहीन, जातिविहीन और शोषणमुक्त समाज की स्थापना करना चाहता है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति और समूह को अपने सर्वांगीण विकास का साधन और अवसर मिले। विनोबा कहते हैं-"जब हम सर्वोदय का विचार करते हैं, तब ऊँच-नीच भावशाली वर्णव्यवस्था दीवार की तरह समाने खड़ी हो जाती है। उसे तोड़े बिना सर्वोदय स्थापित नहीं होगा। सर्वोदय को सफल बनाने के लिए जातिभेद मिटाना होगा और आर्थिक विषमता दूर करनी होगी। इनको मिटाने से ही सर्वोदय समाज बनेगा।"

"सर्वोदय ऐसी समाजरचना चाहता है जिमें वर्ण, वर्ग, धर्म, जाति, भाषा आदि के आधार पर किसी समुदाय का न तो संहार हो, न बहिष्कार हो। सर्वोदय की समाजरचना ऐसी होगी, जो सर्व के निर्माण और सर्व की शक्ति से सर्व के हित में चले, जिसमें कम या अधिक शारीरिक सामथ्र्य के लोगों को समाज का संरक्षण समान रूप से प्राप्त हो और सभी तुल्य पारिश्रमिक (इक्वीटेबल वेजेज) के हकदार माने जाएँ। विज्ञान और लोकतंत्र के इस युग में सर्व की क्रांति का ही मूल्य है और वही सारे विकास का मापदंड है। सर्व की क्रांति में पूँजी और बुद्धि में परस्पर संघर्ष की गुंजाइश नहीं है। वे समान स्तर पर परस्पर पूरक शक्तियाँ हैं। स्वभावत: सर्वोदय की समाजरचना में अंतिम व्यक्ति समाज की चिंता का सबसे पहले अधिकारी है।

सर्वोदय समाज की रचना व्यक्तिगत जीवन की शुद्धि पर ही हो सकती है। जो व्रत नियम व्यक्तिगत जीवन में "मुक्ति" के साधन हैं वे ही जब सामाजिक जीवन में भी व्यवहृत होंगे, तब सर्वोदय समाज बनेगा। विनोबा कहते हैं-"सर्वोदय की दृष्टि से जो समाज रचना होगी, उसका आरंभ अपने जीवन से करना होगा। निजी जीवन में असत्य, हिंसा, परिग्रह आदि हुआ तो सर्वोदय नहीं होगा, क्योंकि सर्वोदय समाज की विषमता को अहिंसा से ही मिटाना चाहता है। साम्यवादी का ध्येय भी विषमता मिटाना है, परंतु इस अच्छे साध्य के लिए वह चाहे जैसा साधन इस्तेमाल कर सकता है, परंतु सर्वोदय के लिए साधनशुद्धि भी आवश्यक है।"

गांधी जी भी कहते है-"समाजवाद का प्रारंभ पहले समाजवादी से होता है। अगर एक भी ऐसा समाजवादी हो, तो उसपर शून्य बढ़ाए जा सकते हैं। हर शून्य से उसकी कीमत दसगुना बढ़ जाएगी, लेकिन अगर पहला अंक शून्य हो, तो उसके आगे कितने ही शून्य बढ़ाए जाएँ, उसकी कीमत फिर भी शून्य ही रहेगी।"

इसीलिए गांधी जी सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, शरीरश्रम, निर्भयता, सर्वधर्मसमन्वय, अस्पृश्यता और स्वदेशी आदि व्रतों के पालन पर इतना जोर देते थे।

सर्वोदय दर्शन के प्रमुख तत्व

(1) पारिश्रमिक की समानता - जितना वेतन नाई को उतना ही वेतन वकील को। "अनटू दिस लास्ट" का यह तत्व सर्वोदय में पूर्णत: गृहीत है। साम्यवाद भी पारिश्रमिक में समानता चाहता है। यह तत्व दोनों में समान है।

(2) प्रतियोगिता का अभाव - प्रतियोगिता संघर्ष को जन्म देती है। साम्यवादी के लिए संघर्ष तो परम तत्व ही है। परंतु सर्वोदय संघर्ष को नहीं, सहकार को मानता है। संघर्ष में हिंसा है। सर्वोदय का सारा भवन ही अहिंसा की नींव पर खड़ा है।

(3) साधनशुद्धि - साम्यवाद साध्य की प्राप्ति के लिए साधनशुद्धि को आवश्यक नहीं मानता। सर्वोदय में साधनशुद्धि प्रमुख है। साध्य भी शुद्ध और साधन भी शुद्ध।

(4) आनुवंशिक संस्कारों से लाभ उठाने के लिए ट्रस्टीशिप की योजना - विनोबा कहते हैं-""संपत्ति की विषमता कृत्रिम व्यवस्था के कारण पैदा हुई है, ऐसा मानकर उसे छोड़ भी दें, तो मनुष्य की शारीरिक और बौद्धिक शक्ति की विषमता पूरी तरह दूर नहीं हो सकती। शिक्षण और नियमन से यह विषमता कुछ अंश तक कम की जा सकती। किंतु आदर्श की स्थिति में इस विषमता के सर्वथा अभाव की कल्पना नहीं की जा सकती। इसलिए शरीर, बुद्धि और संपत्ति इन तीनों में से जो जिसे प्राप्त हो, उसे यही समझना चाहिए कि वह सबके हित के लिए ही मिली है। यही ट्रस्टशिप का भाव है। अपनी शक्ति और संपत्ति का ट्रस्टी के नाते ही मनुष्यमात्र के हित के लिए प्रयोग करना चाहिए। ट्रस्टीशिप में अपरिग्रह की भावना निहित है। साम्यवाद में आनुवंशिकता के लिए कोई स्थान नहीं है। उसकी नीति तो अभिजात्य के संहार की रही है।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 2, February 2023 |

(5) विकेंद्रीकरण - सर्वोदय सत्ता और संपत्ति का विकेंद्रीकरण चाहता है जिससे शोषण और दमन से बचा जा सके। केंद्रीकृत औद्योगीकरण के इस युग में तो यह और भी आवश्यक हो गया है। विकेंद्रीकरण की यही प्रक्रिया जब सत्ता के विषय में लागू की जाती है, तब इसकी निष्पत्ति होती है शासनमुक्त समाज में। साम्यवादी की कल्पना में भी राजसत्ता तेज गर्मी में रखे हु घी की तरह अंत में पिघल जानेवाली है। परंतु उसके पहले उसे जमे हुए घी की तरह ही नहीं, बल्कि ट्रट्स्की के सिर पर मारे हुए हथौड़े की तरह, ठोस और मजबूत होना चाहिए। (ग्रामस्वराज्य)। परंतु गांधी जी ने आदि, मध्य और अंत तीनों स्थितियों में विकेंद्रीकरण और शासनमुक्तता की बात कही है। यही सर्वोदय का मार्ग है।

पूँजीवाद, साम्यवाद और सर्वोदय

इस समय संसार में उत्पादन के साधनों के स्वामित्व की दो पद्धतियों प्रचलित हैं - निजी स्वामित्व (प्राइवेट ओनरशिप) और सरकार स्वामित्व (स्टेट ओनरशिप)। निजी स्वामित्व पूँजीवाद है, सरकार स्वामित्व साम्यवाद। पूँजीवाद में शोषण है, साम्यवाद में दमन। भारत की परंपरा, उसकी प्रतिभा और उसकी परिस्थिति, तीनों की माँग है कि वह राजनीतिक और आर्थिक संगठन की कोई तीसरी ही पद्धति विकसित करे, जिससे पूँजीवाद के "निजी अभिक्रम" और साम्यवाद के "सामूहिक हित" का लाभ तो मिल जाए, किंतु उनके दोषों से बचा जा सके। गांधी जी की "ट्रस्टीशिप" और "ग्रामस्वराज्य" की कल्पना और विनोबा की इस कल्पना पर आधारित "ग्रामदान-ग्राम स्वराज्य" की विस्तृत योजना में, दोनों के दोषों का परिहार और गुणों का उपयोग किया गया है। यहाँ स्वामित्व न निजी है, न सरकार का, बल्कि गाँव का है, जो स्वायत्त है। इस तरह सर्वोदय की यह क्रांति एक नई व्यवस्था संसार के सामने प्रस्तुत कर रही है।

परिणाम

अहिंसा का सामान्य अर्थ है 'हिंसा न करना'। इसका व्यापक अर्थ है - किसी भी प्राणी को तन, मन, कर्म, वचन और वाणी से कोई नुकसान न पहुँचाना। मन में किसी का अहित न सोचना, किसी को कटुवाणी आदि के द्वार भी नुकसान न देना तथा कर्म से भी किसी भी अवस्था में, किसी भी प्राणी कि हिंसा न करना, यह अहिंसा है। जैन धर्म में अहिंसा का बहुत महत्त्व है। जैन धर्म के मूलमंत्र में ही अहिंसा परमो धर्म: (अहिंसा परम (सबसे बड़ा) धर्म कहा गया है। आधुनिक काल में महात्मा गांधी ने भारत की आजादी के लिये जो आन्दोलन चलाया वह काफी सीमा तक अहिंसात्मक था।

हिन्दू शास्त्रों में अहिंसा

हिंदू शास्त्रों की दृष्टि से "अहिंसा" का अर्थ है सर्वदा तथा सर्वदा (मनसा, वाचा और कर्मणा) सब प्राणियों के साथ द्रोह का अभाव। (अंहिसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोह: - व्यासभाष्य, योगसूत्र 2। 30)। अहिंसा के भीतर इस प्रकार सर्वकाल में केवल कर्म या वचन से ही सब जीवों के साथ द्रोह न करने की बात समाविष्ट नहीं होती, प्रत्युत मन के द्वारा भी द्रोह के अभाव का संबंध रहता है। योगशास्त्र में निर्दिष्ट यम तथा नियम अहिंसामूलक ही माने जाते हैं। यदि उनके द्वारा किसी प्रकार की हिंसावृत्ति का उदय होता है तो वे साधना की सिद्धि में उपादेय तथा उपकार नहीं माने जाते। "सत्य" की महिमा तथा श्रेष्ठता सर्वत्र प्रतिपादित की गई है, परंतु यदि कहीं अहिंसा के साथ सत्य का संघर्ष घटित हाता है तो वहाँ सत्य वस्तुत: सत्य न होकर सत्याभास ही माना जाता है। कोई वस्तु जैसी देखी गई हो तथा जैसी अनुमित हो उसका उसी रूप में वचन के द्वारा प्रकट करना तथा मन के द्वारा संकल्प करना "सत्य" कहलाता है, परंतु यह वाणी भी सब भूतों के उपकार के लिए प्रवृत्त होती है, भूतों के उपघात के लिए नहीं। इस प्रकार सत्य की भी कसौटी अहिंसा ही है। इस प्रसंग में वाचस्पति मिश्र ने "सत्यतपा" नामक तपस्वी के सत्यवचन को भी सत्याभास ही माना है, क्योंकि उसने चोरों के द्वारा पूछे जाने पर उस मार्ग से जानेवाले सार्थ (व्यापारियों का समूह) का सच्चा परिचय दिया था। हिंदू शास्त्रों में अहिंसा, सत्य, अस्तेय (न चुराना), ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह, इन पाँचों यमों को जाति, देश, काल तथा समय से अनवच्छिन्न होने के कारण समभावेन सार्वभौम तथा महाव्रत कहा गया है (योगवूत्र 2। 31) और इनमें भी, सबका आधारा होने से, "अहिंसा" ही सबसे अधिक महाव्रत कहलाने की योग्यता रखती है।

जैन शास्त्रों में अहिंसा

जैन धर्म में सब जीवों के प्रति संयमपूर्ण व्यवहार अहिंसा है। अहिंसा का शब्दानुसारी अर्थ है, हिंसा न करना। इसके पारिभाषिक अर्थ विध्यात्मक और निषेधात्मक दोनों हैं। रागद्वेषात्मक प्रवृत्ति न करना, प्राणवध न करना या प्रवृत्ति मात्र का विरोध करना निषेधात्मक अहिंसा है; सत्प्रवृत्ति, स्वाध्याय, अध्यात्मसेव, उपदेश, ज्ञानचर्चा आदि आत्महितकारी व्यवहार विध्यात्मक अहिंसा है। संयमी के द्वारा भी अशक्य कोटि का प्राणवध हो जाता है, वह भी निषेधात्मक अहिंसा हिंसा नहीं है। निषेधात्मक अहिंसा में केवल हिंसा का वर्जन होता है, विध्यात्मक अहिंसा में सत्क्रियात्मक सक्रियता होती है। यह स्थूल दृष्टि का निर्णय है। गहराई में पहुँचने पर तथ्य कुछ और मिलता है। निषेध में प्रवृत्ति और प्रवृत्ति में निषेध होता ही है। निषेधात्मक अहिंसा में सत्प्रवृत्ति और सत्प्रवृत्यात्मक अहिंसा में हिंसा का निषेध होता है। हिंसा न करनेवाला यदि आँतरिक प्रवृत्तियों को शुद्ध न करे तो वह अहिंसा न होगी। इसलिए निषेधात्मक अहिंसा में सत्प्रवृत्ति की अपेक्षा रहती है, वह बाह्य हो चाहे आँतरिक, स्थूल हो चाहे सूक्ष्म। सत्प्रवृत्यात्मक अहिंसा में हिंसा का निषेध होना

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 2, February 2023 |

आवश्यक है। इसके बिना कोई प्रवृत्ति सत् या अहिंसा नहीं हो सकती, यह निश्चय दृष्टि की बात है। व्यवहार में निषेधात्मक अहिंसा को निष्क्रिय अहिंसा और विध्यात्मक अहिंसा को सक्रिय अहिंसा कहा जाता है।

जैन ग्रंथ आचारांगसूत्र में, जिसका समय संभवत: तीसरी चौथी शताब्दी ई. पू. है, अहिंसा का उपदेश इस प्रकार दिया गया है : भूत, भावी और वर्तमान के अर्हत् यही कहते हैं-किसी भी जीवित प्राणी को, किसी भी जंतु को, किसी भी वस्तु को जिसमें आत्मा है, न मारो, न (उससे) अनुचित व्यवहार करो, न अपमानित करो, न कष्ट दो और न सताओ।

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और वनस्पति, ये सब अलग जीव हैं। पृथ्वी आदि हर एक में भिन्न-भिन्न व्यक्तित्व के धारक अलग-अलग जीव हैं। उपर्युक्त स्थावर जीवों के उपरांत त्रस (जंगम) प्राणी हैं, जिनमें चलने फिरने का सामर्थ्य होता है। ये ही जीवों के छह वर्ग हैं। इनके सिवाय दुनिया में और जीव नहीं हैं। जगत् में कोई जीव त्रस (जंगम) है और कोई जीव स्थावर। एक पर्याय में होना या दूसरी में होना कर्मों की विचित्रता है। अपनी-अपनी कमाई है, जिससे जीव अन्न या स्थावर होते हैं। एक ही जीव जो एक जन्म में अन्न होता है, दूसरे जन्म में स्थावर हो सकता है। त्रस हो या स्थावर, सब जीवों को दु:ख अप्रिय होता है। यह समझकर मुमुक्षु सब जीवों के प्रति अहिंसा भाव रखे।

सब जीव जीना चाहते हैं, मरना कोई नहीं चाहता। इसलिए निर्ग्रंथ प्राणिवध का वर्जन करते हैं। सभी प्राणियों को अपनी आयु प्रिय है, सुख अनुकूल है, दु:ख प्रतिकूल है। जो व्यक्ति हरी वनस्पति का छेदन करता है वह अपनी आत्मा को दंड देनेवाला है। वह दूसरे प्राणियों का हनन करके परमार्थत: अपनी आत्मा का ही हनन करता है।

आत्मा की अशुद्ध परिणति मात्र हिंसा है; इसका समर्थन करते हुए आचार्य अमृतचंद्र ने लिखा है : असत्य आदि सभी विकार आत्मपरिणति को बिगाड़नेवाले हैं, इसलिए वे सब भी हिंसा हैं। असत्य आदि जो दोष बतलाए गए हैं वे केवल "शिष्याबोधाय" हैं। संक्षेप में रागद्वेष का अप्रादुर्भाव अहिंसा और उनका प्रादुर्भाव हिंसा है। रागद्वेषरहित प्रवृत्ति से अशक्य कोटि का प्राणवध हो जाए तो भी नैश्चयिक हिंसा नहीं होती, रागद्वेषरहित प्रवृत्ति से, प्राणवध न होने पर भी, वह होती है। जो रागद्वेष की प्रवृत्ति करता है वह अपनी आत्मा का ही घात करता है, फिर चाहे दूसरे जीवों का घात करे या न करे। हिंसा से विरत न होना भी हिंसा है और हिंसा में परिणत होना भी हिंसा है। इसलिए जहाँ रागद्वेष की प्रवृत्ति है वहाँ निरंतर प्राणवध होता है।

अहिंसा की भूमिकाएँ

हिंसा मात्र से पाप कर्म का बंधन होता है। इस दृष्टि से हिंसा का कोई प्रकार नहीं होता। किंतु हिंसा के कारण अनेक होते हैं, इसलिए कारण की दृष्टि से उसके प्रकार भी अनेक हो जाते हैं। कोई जानबूझकर हिंसा करता है, तो कोई अनजान में भी हिंसा कर डालता है। कोई प्रयोगजनवश करता है, तो काई बिना प्रयोजन भी।

सूत्रकृतांग में हिंसा के पाँच समाधान बतलाए गए हैं : (1) अर्थदंड, (2) अनर्थदंड, (3) हिंसादंड, (4) अकस्माद्दंड, (5) दृष्टिविपर्यासदंड। अहिंसा आत्मा की पूर्ण विशुद्ध दशा है। वह एक ओर अखंड है, किंतु मोह के द्वारा वह ढकी रहती है। मोह का जितना ही नाश होता है उतना ही उसका विकास। इस मोहविलय के तारतम्य पर उसके दो रूप निश्चित किए गए हैं : (1) अहिंसा महाव्रत, (2) अहिंसा अणुव्रत। इनमें स्वरूपभेद नहीं, मात्रा (परिमाण) का भेद है।

मुनि की अहिंसा पूर्ण है, इस दशा में श्रावक की अहिंसा अपूर्ण। मुनि की तरह श्रावक सब प्रकार की हिंसा से मुक्त नहीं रह सकता। मुनि की अपेक्षा श्रावक की अहिंसा का परिमाण बहुत कम है। उदाहरणत: मुनि की अहिंसा 20 बिस्वा है तो श्रावक की अहिंसा सवा बिस्वा है। (पूर्ण अहिंसा के अंध बीस हैं, उनमें से श्रावक की अहिंसा का सवा अंश है।) इसका कारण यह है कि श्रावक 19 जीवों की हिंसा को छोड़ सकता है, वादर स्थावर जीवों की हिंसा को नहीं। इससे उसकी अहिंसा का परिमाण आधा रह जाता है-दस बिस्वा रह जाता है। इसमें भी श्रावक उन्नीस जीवों की हिंसा का संकल्पपूर्वक त्याग करता है, आरंभजा हिंसा का नहीं। अत: उसका परिमाण उसमें भी आधा अर्थात् पाँच बिस्वा रह जाता है। संकल्पपूर्वक हिंसा भी उन्हीं उन्नीस जीवों की त्यागी जाती है जो निरपराध हैं। सापराध त्रस जीवों की हिंसा से श्रावक मुक्त नहीं हो सकता। इससे वह अहिंसा ढाई बिस्वा रह जाती है। निरपराध उन्नीस जीवों की भी निरपेक्ष हिंसा को श्रावक त्यागता है। सापेक्ष हिंसा तो उससे हो जाती है। इस प्रकार श्रावक (धर्मोपासक या व्रती गृहस्थ) की अंहिसा का परिमाण सवा बिस्वा रह जाता है। इस प्राचीन गाथा में इसे संक्षेप में इस प्रकार कहा है :

जीवा सुहुमाथूला, संकप्पा, आरम्भाभवे दुविहा।

सावराह निरवराहा, सविक्खा चैव निरविक्खा।।

(1) सूक्ष्म जीवहिंसा, (2) स्थूल जीवहिंसा, (3) संकल्प हिंसा, (4) आरंभ हिंसा, (5) सापराध हिंसा, (6) निरपराध हिंसा, (7) सापेक्ष हिंसा, (8) निरपेक्ष हिंसा। हिंसा के ये आठ प्रकार हैं। श्रावक इनमें से चार प्रकार की, (2, 3, 6, 8) हिंसा का त्याग करता है। अत: श्रावक की अहिंसा अपूर्ण है।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 2, February 2023 |

बौद्ध एवं ईसाई धर्म

इसी प्रकार बौद्ध और ईसाई धर्मों में भी अहिंसा की बड़ी महिमा है। वैदिक हिंसात्मक यज्ञों का उपनिषत्कालीन मनीषियों ने विरोध कर जिस परंपरा का आरंभ किया था उसी परंपरा की पराकाष्ठा जैन और बौद्ध धर्मों ने की। जैन अहिंसा सैद्धांतिक दृष्टि से सारे धर्मों की अपेक्षा असाधारण थी। बौद्ध अहिंसा नि:संदेह आस्था में जैन धर्म के समान महत्त्व की न थी, पर उसका प्रभाव भी संसार पर प्रभूत पड़ा। उसी का यह परिणाम था कि रक्त और लूट के नाम पर दौड़ पड़नेवाली मध्य एशिया की विकराल जातियाँ प्रेम और दया की मूर्ति बन गईं। बौद्ध धर्म के प्रभाव से ही ईसाई भी अहिंसा के प्रति विशेष आकृष्ट हुए; ईसा ने जो आत्मोत्सर्ग किया वह प्रेम और अहिंसा का ही उदाहरण था। उन्होंने अपने हत्यारों तक की सद्गति के लिए भगवान से प्रार्थना की और अपने अनुयायियों से स्पष्ट कहा है कि यदि कोई गाल पर प्रहार करे तो दूसरे को भी प्रहार स्वीकार करने के लिए आगे कर दो। यह हिंसा का प्रतिशोध की भावना नष्ट करने के लिए ही था। तोल्स्तोइ (टॉल्स्टॉय) और गांधी ईसा के इस अहिंसात्मक आचरण से बहुत प्रभावित हुए। गांधी ने तो जिस अहिंसा का प्रचार किया वह अत्यंत महत्वपूर्ण थी। उन्होंने कहा कि उनका विरोध असत् से है, बुराई से नहीं। उनसे आवृत व्यक्ति सदा प्रेम का अधिकारी है, हिंसा का कभी नहीं। अपने आँदोलन के प्राय: चोटी पर होते भी चौराचौरी के हत्याकांड से विरक्त होकर उन्होंने आँदोलन बंद कर दिया था।

निष्कर्ष

ब्रह्मचर्य योग के आधारभूत स्तंभों में से एक है। ब्रह्मचर्य का अर्थ है सात्विक जीवन बिताना, शुभ विचारों से अपने वीर्य का रक्षण करना, भगवान का ध्यान करना और विद्या ग्रहण करना। यह वैदिक धर्म वर्णाश्रम का पहला आश्रम भी है, जिसके अनुसार यह ०-२५ वर्ष तक की आयु का होता है और जिस आश्रम का पालन करते हुए विद्यार्थियों को भावी जीवन के लिये शिक्षा ग्रहण करनी होती है। ब्रह्मचर्य से असाधारण ज्ञान पाया जा सकता है वैदिक काल और वर्तमान समय के सभी ऋषियों ने इसका अनुसरण करने को कहा है क्यों महत्वपूर्ण है ब्रह्मचर्य- हमारी जिंदगी मे जितना जरुरी वायु ग्रहण करना है उतना ही जरुरी ब्रह्मचर्य है। आज से पहले हजारों वर्ष से हमारे ऋषि मुनि ब्रह्मचर्य का तप करते आए हैं क्योंकि इसका पालन करने से हम इस संसार के सर्वसुखो की प्राप्ति कर सकते हैं।

व्युत्पत्ति

ये शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है:- ब्रह्म + चर्य , अर्थात ज्ञान प्राप्ति के लिए जीवन बिताना।

योग

योग में ब्रह्मचर्य का अर्थ अधिकतर यौन संयम समझा जाता है। यौन-संयम का अर्थ अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग समझा जाता है, जैसे विवाहितों का एक-दूसरे के प्रति निष्ठावान रहना, या आध्यात्मिक आकांक्षी के लिये पूर्ण ब्रह्मचर्य।

जैन धर्म में ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य, जैन धर्म में पवित्र रहने का गुण है, यह जैन मुनि और श्रावक के पांच मुख्य व्रतों में से एक है (अन्य है सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह)| जैन मुनि और आर्यिका दीक्षा लेने के लिए मन, वचन और काय से ब्रह्मचर्य अनिवार्य है। जैन श्रावक के लिए ब्रह्मचर्य का अर्थ है शुद्धता। यह यौन गतिविधियों में भोग को नियंत्रित करने के लिए इंद्रियों पर नियंत्रण के अभ्यास के लिए हैं। जो अविवाहित हैं, उन जैन श्रावको के लिए, विवाह से पहले यौनाचार से दूर रहना अनिवार्य है।

आयुर्वेद में ब्रह्मचर्य का महत्व

आयुर्वेद में कहा गया है कि ब्रह्मचर्य शरीर के तीन स्तम्भों में से एक प्रमुख स्तम्भ (आधार) है।

> त्रयः उपस्तम्भाः । आहारः स्वप्नो ब्रह्मचर्यं च सति ।
> (तीन उपस्तम्भ हैं। आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य।)

ब्रह्मचारीसूक्त

अथर्ववेद का ग्यारहवें काण्ड का पाँचवाँ सूक्त ब्रह्मचर्य्य के लिये ही समर्पित है। इसमें तरह-तरह से ब्रह्मचर्य की महिमा वर्णित है।

ब्रह्मचार्येति समिधा समिद्धः कार्ष्णं वसानो दीक्षितो दीर्घश्मश्रुः।
स सद्य एति पूर्वस्मादुत्तरं समुद्रं लोकान्त्संगृभ्य मुहुराचरिक्रत्॥ -- (अथर्ववेद ११.५.१७)
अर्थ-- जो ब्रह्मचारी होता है, वही ज्ञान से प्रकाशित तप और बड़े बड़े केश श्मश्रुओं से युक्त दीक्षा को प्राप्त होके विद्या को प्राप्त होता है। तथा जो कि शीघ्र ही विद्या को ग्रहण करके पूर्व समुद्र जो ब्रह्मचर्याश्रम का अनुष्ठान है, उसके पार उतर के उत्तर समुद्रस्वरूप गृहाश्रम को प्राप्त होता है और अच्छी प्रकार विद्या का संग्रह करके विचारपूर्वक अपने उपदेश का सौभाग्य बढ़ाता है।

| ISSN: 2395-7639 | www.ijmrsetm.com | Impact Factor: 7.580| A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Journal |

| Volume 10, Issue 2, February 2023 |

ब्रह्मचारी जनयन् ब्रह्मापो लोकं प्रजापतिं परमेष्ठिनं विराजम्।
गर्भो भूत्वामृतस्य योनाविन्द्रो ह भूत्वाऽसुरांस्ततर्ह॥ -- (अथर्ववेद ११.५.१८)
अर्थ-- वह ब्रह्मचारी वेदविद्या को यथार्थ जान के प्राणविद्या, लोकविद्या तथा प्रजापति परमेश्वर जो कि सब से बड़ा और सब का प्रकाशक है, उस का जानना, इन विद्याओं में गर्भरूप और इन्द्र अर्थात् ऐश्वर्ययुक्त हो के असुर अर्थात् मूर्खों की अविद्या का छेदन कर देता है।

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं वि रक्षति।
आचार्यो ब्रह्मचर्य्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते॥ -- (अथर्ववेद ११.५.१९)
अर्थ-- पूर्ण ब्रह्मचर्य से विद्या पढ़ के और सत्यधर्म के अनुष्ठान से राजा राज्य करने को और आचार्य विद्या पढ़ाने को समर्थ होता है। आचार्य उस को कहते हैं कि जो असत्याचार को छुड़ा के सत्याचार का और अनर्थों को छुड़ा के अर्थों का ग्रहण कराके ज्ञान को बढ़ा देता है॥6॥

ब्रह्मचर्य के लाभ

अगर आप मन, वाणी व बुद्धि को शुध्द रखना चाहते है तो आप को ब्रह्मचर्य पालन करना बहुत जरुरी है आयुर्वेद का भी यही कहना है कि अगर आप ब्रह्मचर्य का पालन पूर्णतया 3 महीनो तक करते है तो आप को मनोवल, देहवल और वचनवल मे परिवर्तन महसूस होगा , जीवन के ऊँचे से ऊँचे लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ब्रह्मचर्य का जीवन मे होना बहुत जरुरी है।

ब्रह्मचर्य मनुष्य का मन उनके नियंत्रण में रहता है।
ब्रह्मचर्य का पालन करने से देह निरोगी रहती है।
ब्रह्मचर्य का पालन करने से मनोबल बढ़ता है।
ब्रह्मचर्य का पालन करने से रोग प्रतिरोधक शक्ति बढती है।
ब्रह्मचर्य मनुष्य की एकाग्रता और ग्रहण करने की क्षमता बढाता है।
ब्रह्मचर्य पालन करने वाला व्यक्ति किसी भी कार्य को पूरा कर सकता है।
ब्रह्मचारी मनुष्य हर परिस्थिति में भी स्थिर रहकर उसका सामना कर सकता है।
ब्रम्हचर्य के पालन से शारीरिक क्षमता , मानसिक बल , बौद्धिक क्षमता और दृढ़ता बढ़ती है।
ब्रम्हचर्य का पालन करने से चित्त एकदम शुद्ध हो जाता है।

प्रतिक्रिया दें संदर्भ

1. रीप्रिंट द इसेंशियल गाँधी: एन एन्थॉलजी ऑफ हिज राइटिंग्स ओन हिज लाइफ, वर्क ऐंड आइडियाज Archived 2007-07-02 at the Wayback Machine., लुइस फिशर, संपा., २००२ (रिप्रिंट संस्करण) पृ. १०६–१०८.
2. ↑ रीप्रिंट द इसेंशियल गाँधी: एन एंथॉलजी ऑफ हिज राइटिंग्स ओन हिज लाइफ, वर्क ऐंड आइडियाज Archived 2007-07-02 at the Wayback Machine.लुई फिशर, संपा., २००२ (रीप्रिंट संस्करण) पृ. ३०८–९.
3. "Gandhi's views - Peace, Nonviolence and Conflict Resolution". Mkgandhi.org. मूल से 24 फ़रवरी 2017 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 2017-05-09.
4. "What is Nonviolence?". Nonviolence International. 2014-06-20. मूल से 1 मई 2017 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 2017-05-09.
5. http://www.gandhifoundation.net/about%20gandhi6.htm “Truth (satya) implies love, and firmness (agraha) engenders and therefore serves as a synonym for force. I thus began to call the Indian movement Satyagraha, that the is to say, the Force which is born of Truth and Love or nonviolence, and gave up the use of the phrase “passive resistance”, in connection with it, so much so that even in English writing we often avoided it and used instead the word “satyagraha” itself or some other equivalent English phrase.”
6. 1. हरमन गिलिओमी और लारेंस श्लेमर (1989), फ़्रॉम एपार्थाइड टु नेशन बिल्डिंग, ऑक्सफ़र्ड युनिवर्सिटी प्रेस, कैपटाउन.
7. 2. पीटर वारविक (सम्पा.) (1980), द साउथ अफ़्रीकन वार : एंग्लो-बोअर वार, 1899-1902, लोंगमेन, लंदन.
8. 3. केविन शिलिंगटन (1987), हिस्ट्री ऑफ़ साउथ अफ़्रीका, लोंगमेन ग्रुप, हांगकांग.

Impact Factor: 7.580

INTERNATIONAL JOURNAL
OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH
IN SCIENCE, ENGINEERING, TECHNOLOGY AND MANAGEMENT

+91 99405 72462 +91 63819 07438 ijmrsetm@gmail.com